ॐ

सिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय-धवला-टीका-समण्णिदो

तस्स विदियखंडो

खुद्दाबंधो

बंधग-संतपरूवणा

जयउ धरसेणणाहो जेण महाकम्मपयडिपाहुडसेलो ।
बुद्धिसिरेणुद्धरिओ समप्पिओ पुप्फयंतस्स ॥

जे ते बंधगा णाम तेसिमिमो णिद्देसो ॥ १ ॥

'जे ते बंधगा णाम' इदि वयणं बंधगाणं पुव्वपसिद्धत्तं सूचेदि । पुव्वं कम्हि पसिद्धे बंधगे सूचेदि ? महाकम्मपयडिपाहुडम्मि । तं जहा — महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदि-वेदणादि[1] चदुवीसअणियोगद्दारेसु छट्ठस्स बंधणेत्ति अणियोगद्दारस्स बंधो बंधगा

जिन्होंने महाकर्मप्रकृतिप्राभृतरूपी शैलका अपने बुद्धिरूपी शिरसे उद्धार किया और पुष्पदन्ताचार्यको समर्पित किया ऐसे धरसेनाचार्य जयवन्त होवें ।

जो वे बंधक जीव हैं उनका यहां निर्देश किया जाता है ॥ १ ॥

शंका — 'जो वे बंधक हैं' ऐसा यह वचन बंधकोंकी पूर्वमें प्रसिद्धिको सूचित करता है । अतः पहले किस ग्रंथमें प्रसिद्ध बंधकोंकी यह सूचना है ?

समाधान — यह सूचना महाकर्मप्रकृतिप्राभृतमें प्रसिद्ध बंधकोंकी है । वह इस प्रकार है — महाकर्मप्रकृतिप्राभृतके कृति, वेदना आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमें छठे

---

१ वेदण्णादिसु पडु. मु.

बंधणिज्जं बंधविहाणमिदि चत्तारि अधियारा। तेसु बंधगेत्ति विदिओ अधियारो सो एदेण वयणेण सूचिदो। जे ते महाकम्मपयडिपाहुडम्मि बंधगा णिद्दिट्ठा तेसिमिमो णिद्देसो त्ति वुत्तं होदि।

बंधया णाम जीवा चेव। कुदो ? अजीवस्स मिच्छत्तादिपच्चएहि चत्तस्स बंधगत्ताणुववत्तीदो। ते च जीवा जीवट्ठाणे चोद्दस्सगुणट्ठाणविसिट्ठा चोद्दस्समग्गणट्ठाणेसु संतादिअट्ठहि अणियोगद्दारेहि मग्गिदा। संपहि तेसिं जीवाणं संतादिणा अवगदाणं पुणरवि परूवणे कीरमाणे पुणरुत्तदोसो ढुक्कदि त्ति ? ढुक्कदि पुणरुत्तदोसो जदि तेसिं जीवाणं तेहि चेव गुणट्ठाणेहि विसेसियाणं चोद्दससु मग्गणट्ठाणेसु तेहि[1] चेव अट्ठहि अणियोगद्दारेहि मग्गणा कीरदे। णवरि एत्थ चोद्दसगुणट्ठाणविसेसणमवणिय चोद्दससु मग्गणट्ठाणेसु एक्कारसेहि अणियोगद्दारेहि पुव्वुत्तजीवाणं परूवणा कीरदे। तेण पुणरुत्त-दोसो ण ढुक्कदि त्ति।

जीवट्ठाणम्मि कदपरूवणादो चेव एत्थ परूविज्जमाणो अत्थो जेण णव्वदि तेण

अनुयोगद्वार बन्धनके बंध, बंधक बंधनीय और बंधविधान, ये चार अधिकार हैं। उनमें जो बन्धक नामका दूसरा अधिकार है वही इस सूत्र वचनद्वारा सूचित किया गया है कहनेका तात्पर्य यह है कि जो वे महाकर्मप्रकृतिप्राभृतमें बन्धक कहकर निर्दिष्ट किये गये हैं उन्हींका यहां निर्देश है।

बन्धक जीव ही होते हैं, क्योंकि, मिथ्यात्व आदिक बन्धके कारणोंसे रहित अजीवके बन्धकभावकी उपपत्ति नहीं बनती।

शंका— उन ही बन्धक जीवोंका जीवस्थान खण्डमें चौदह गुणस्थानोंकी विशेषता सहित चौदह मार्गणस्थानोंमें सत्, संख्या आदि आठ अनुयोगोंके द्वारा अन्वेषण किया गया है। अब सत् आदि प्ररूपणाओं द्वारा जाने हुए उन्हीं जीवोंका फिर प्ररूपण करने पर पुनरुक्ति दोष उत्पन्न होता है।

समाधान— पुनरुक्ति दोष प्राप्त होता यदि उन जीवोंका उन्हीं गुणस्थानोंकी विशेषता सहित चौदह मार्गणाओंमें उन्हीं आठ अनुयोगों द्वारा अन्वेषण किया जाता हैं। किन्तु यहां तो चौदह गुणस्थानोंकी विशेषताको छोड़कर चौदह मार्गणास्थानोंमें ग्यारह अनुयोगद्वारोंसे पूर्वोक्त जीवोंकी प्ररूपणा की जा रही है। अतः यहां पुनरुक्ति दोष नहीं प्राप्त होता।

शंका— जीवस्थान खण्डमें जो प्ररूपणा की गई है उसीसे यहां प्ररूपित किये

---

१ अ.आ. प्रत्योः 'तेहं' इति पाठः।

एदीए परूवणाए ण किंचि फलं पेच्छामो ? ण, मग्गणट्ठाणेसु चोद्दसगुणट्ठाणाणं संतादि-परूवणादो मग्गणट्ठाणविसेसिदजीवपरूवणाए एगत्ताणुवलंभादो। जदि तत्तो एयत्तमत्थि तो अवगम्मदे, ण च एयत्तं पेच्छामो। एदेण कमेण ट्ठिददव्वादिअणियोगद्दाराणि घेत्तूण जीवट्ठाणं कयमिदि जाणावणट्ठं वा बंधयाणं परूवणा आगदा। तम्हा बंधयाणं परूवणं णायपत्तमिदि।

णामबंधया ठवणबंधया दव्वबंधया भावबंधया चेदि चउव्विहा बंधया। तत्थ णामबंधया णाम 'बंधया' इदि सद्दो जीवाजीवादिअट्ठभंगेसु पयट्टंतो। एसो णामणिक्खेवो दव्वट्ठियणयमवलंबिय ट्ठिदो। कुदो ? णामस्स सामण्णे पउत्तिदंसणादो, दिट्ठाणंतरसमए णट्ठदव्वेसु संकेयगहणाणुववत्तीदो। कट्ठ-पोत्त-लेप्पकम्मादिसु सब्भावासब्भावभेएण जे ठविदा बंधया त्ति ते ठवणबंधया णाम। एसो णिक्खेवो दव्वट्ठियणयमवलंबिय ट्ठिदो। कुदो ? 'सो एसो' त्ति एयत्तज्झवसाएण विणा ट्ठवणाए अणुववत्तीदो। जे ते दव्वबंधया

जानेवाले अर्थका ज्ञान हो जाता है, अतः इस प्ररूपणाका हमें तो किंचित् भी फल दिखाई नहीं देता ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि, मार्गणास्थानोंमें चौदह गुणस्थानोंकी सत्, संख्या आदिरूप प्ररूपणासे मार्गणास्थान विशेषित जीवप्ररूपणाका एकत्व नहीं पाया जाता। यदि उस प्ररूपणासे इस प्ररूपणामें एकत्व होता तो हम जान लेते। किन्तु हमें उन दोनों प्ररूपणाओंमें एकत्व दिखाई नहीं देता ?

अथवा, इस क्रमसे स्थित द्रव्यादि अनुयोगद्वारोंको लेकर जीवस्थान खण्डकी रचना की गई है, यह जतलानेके लिये बन्धकोंकी प्ररूपणा प्रस्तुत है। अतएव बन्धकोंकी प्ररूपणा न्यायप्राप्त है।

बन्धक चार प्रकारके हैं—नामबन्धक, स्थापनाबन्धक द्रव्यबन्धक और भावबन्धक। उनमें नामबन्धक तो 'बन्धक' यह शब्द ही है जो जीवबन्धक, अजीवबन्धक आदि आठ भंगोंमें प्रवृत्त होता है। यह नामनिक्षेप द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करके स्थित है, क्योंकि, नामकी सामान्यमें प्रवृत्ति देखी जाती है, चूंकि दिखाई देनेके अनन्तर समयमें ही नष्ट हुए पदार्थोंमें संकेत ग्रहण करना नहीं बनता।

काष्ठकर्म, पोतकर्म, लेप्यकर्म आदिमें सद्भाव व असद्भावके भेदसे जिनकी 'ये बन्धक हैं' ऐसी स्थापना की गई हो वे स्थापनाबन्धक हैं। यह निक्षेप भी द्रव्यार्थिक नयके अवलम्बनसे स्थित है क्योंकि, 'वह यही है' ऐसे एकत्वका निश्चय किये बिना स्थापनानिक्षेप बन नहीं सकता।

णाम ते दुविहा आगम-णोआगमभेएण। बंधयपाहुडजाणया अणुवजुत्ता आगमदव्वबंधया णाम। कधमागमेण विप्पमुक्कस्स जीवदव्वस्स आगमववएसो ? ण एस दोसो, आगमाभावे[1] वि आगमसंसकारसहियस्स पुव्वं लद्धागमववएसस्स जीवदव्वस्स आगमववएसुवलंभा। एदेणेव भट्ठसंसकारजीवदव्वस्स वि गहणं कायव्वं, तत्थ वि आगमववएसुवलंभा। णोआगमदो[2] दव्वबंधया तिविहा, जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तबंधयभेदेण। जाणुगसरीर-भवियदव्वबंधया सुगमा। तव्वदिरित्तदव्वबंधया दुविहा—कम्मबंधयाणोकम्मबंधया चेदि। तत्थ जे णोकम्मबंधया ते तिविहा -- सचित्तणोकम्मदव्वबंधया अचित्तणोकम्मदव्वबंधया मिस्सणोकम्मदव्वबंधया चेदि। तत्थ सचित्तणोकम्मदव्वबंधया जहा हत्थीणं बंधया, अस्साणं बंधया इच्चेवमादि। अचित्तणोकम्मदव्वबंधया जहा कट्ठाणं बंधया, सुप्पाणं बंधया कडयाणं[3] बंधया, इच्चेवमादि। मिस्सणोकम्म[4]दव्वबंधया जहा साहरणाणं हत्थीणं बंधया इच्चेवमादि।

जो द्रव्यबन्धक हैं वे आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारके हैं। बन्धकप्राभृतके जानकार किन्तु उसमें अनुपयुक्त जीव आगमद्रव्यबन्धक हैं।

शंका—जो आगमके उपयोगसे रहित है उस जीव द्रव्यको 'आगम' कैसे कहा जा सकता है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, आगम संज्ञाको प्राप्त न होने पर भी आगमके संस्कार सहित एवं पूर्वकालमें आगम संज्ञाको प्राप्त जीव द्रव्यको आगम कहना पाया जाता है। इसीसे जिस जीवका आगमसंस्कार भ्रष्ट हो गया है उसका ग्रहण कर लेना चाहिये, क्योंकि, उसके भी आगम संज्ञा पाई जाती है।

ज्ञायकशरीर, भव्य और तद्व्यतिरिक्तके भेदसे नोआगमद्रव्यबन्धक तीन प्रकारके हैं। उनमें ज्ञायकशरीर और भाविद्रव्यबन्धक ये दो भेद सुगम हैं। तद्व्यतिरिक्त द्रव्यबन्धक दो प्रकारके हैं-- कर्मबन्धक और नोकर्मबन्धक। उनमें जो नोकर्मबन्धक हैं वे तीन प्रकारके हैं-- सचित्तनोकर्मद्रव्यबन्धक, अचित्तनोकर्मद्रव्यबन्धक और मिश्रनोकर्मद्रव्यबन्धक। उनमें सचित्तनोकर्मद्रव्यबन्धक, जैसे--हाथी बांधनेवाले, घोडे बांधनेवाले इत्यादि। अचित्तनोकर्मद्रव्यबन्धक, जैसे-- लकडी बांधनेवाले, सूपा बांधनेवाले, कट (चटाई) बांधनेवाले इत्यादि। मिश्रनोकर्मद्रव्यबन्धक, जैसे-- आभरणों सहित हाथियोंके बांधनेवाले, इत्यादि।

---

१ अ. स. प्रत्योः 'आगमभावे' इति पाठः।

२ णोआगमादो मु.।

३ अ. स. प्रत्योः किडुयाणं इति पाठः

४ मु. प्रती मिस्सणोकम्म इति पाठः।

जे कम्मबंधया ते दुविहा-इरियावहबंधया सांपराइयबंधया चेदि । तत्थ जे इरियावहबंधया ते दुविहा छदुमत्था केवलिणो चेदि । जे छदुमत्था ते दुविहा-उवसंत-कसाया खीणकसाया चेदि । जे सांपराइया ते दुविहा-सुहुमसांपराइया बादरसांपराइया चेदि । जे सुहुमसांपराइया बंधया ते दुविहा-असंपराइयादिया बादरसांपराइयादिया चेदि । जे बादरसांपराइया ते तिविहा असंपराइयादिया सुहुमसांपराइयादिया अणादि-बादरसांपराइया चेदि । तत्थ जे अणादिबादरसांपराइया ते तिविहा-उवसामया खवया अक्खवयाणुवसामया चेदि । तत्थ जे उवसामया ते दुविहा-अपुव्वकरणउवसामया अणियट्टिकरणउवसामया चेदि । जे खवया ते दुविहा-अपुव्वकरणखवया अणियट्टि-करणखवया चेदि । तत्थ जे अक्खवयअणुवसामगा ते दुविहा-अणादिअपज्जवसिदबंधा च अणादिसपज्जवसिदबंधा चेदि । तत्थ जे भावबंधया ते दुविहा-आगम-णोआगम-भावबंधयभेदेण । तत्थ जे बंधपाहुडजाणया उवजुत्ता आगमभावबंधया णाम । णोआगमभावबंधया जहा कोह-माण-माया-लोह-पेम्माइं अप्पणाइं करेंता ।

एदेसु बंधगेसु कम्मबंधएहि एत्थ अधियारो । एदेसिं बंधयाणं णिद्देसे कीरमाणे चोद्दसमग्गणट्ठाणाणि आधारभूदाणि होंति । काणि ताणि मग्गणट्ठाणाणि त्ति वुत्ते

जो कर्मोके बन्धक हैं वे दो प्रकारके हैं—ईर्यापथकर्मबन्धक और साम्परायिककर्म बन्धक । उनमें जो ईर्यापथकर्मबन्धक हैं वे दो प्रकारके हैं—छद्मस्थ और केवली । जो छद्मस्थ हैं वे दो प्रकारके हैं—उपशान्तकषाय और क्षीणकषाय । जो साम्परायिकबन्धक हैं वे दो प्रकारके हैं—सूक्ष्मसाम्परायिक और बादरसाम्परायिक ।

जो सूक्ष्मसाम्परायिक बन्धक हैं वे दो प्रकारके हैं—असाम्परायादिक और बादरसाम्परायादिक । जो बादरसाम्परायिक हैं वे तीन प्रकारके हैं—असाम्परायादिक, सूक्ष्मसाम्परायादिक और अनादिबादरसाम्परायिक । उनमें जो अनादिबादरसाम्परायिक हैं वे तीन प्रकारके हैं—उपशामक, क्षपक और अक्षपकानुपशामक । उनमें जो उप-शामक हैं वे दो प्रकारके हैं—अपूर्वकरण उपशामक और अनिवृत्तिकरण उपशामक जो क्षपक हैं वे दो प्रकारके हैं—अपूर्वकरण क्षपक और अनिवृत्तिकरण क्षपक । उनमें जो अक्षपकानुपशामक हैं वे दो प्रकारके हैं—अनादि-अपर्यवसित बन्धक और अनादि सपर्यवसित बन्धक ।

उनमें जो भावबन्धक हैं वे आगमभावबन्धक और नोआगमभावबन्धकके भेदसे दो प्रकारके हैं । उनमें जो बन्धप्राभृतके जानकर और उसमें उपयोग रखनेवाले हैं वे आगमभावबन्धक है । नोआगमभावबन्धक जैसे क्रोध, मान, माया, लोभ व प्रेमको आत्मसात् करनेवाले ।

इन सब बन्धकोंमें कर्मबन्धकोंका ही यहां अधिकार है । इन बन्धकोंका निर्देश करनेपर चौदह मार्गणास्थान आधारभूत हैं । वे मार्गणास्थान कौनसे हैं ? ऐसा पूछे

उत्तरसुत्तं भणदि—

गइ इंदिए काए जोगे वेदे कसाए णाणे संजमे दंसणे लेस्साए भविए[1] सम्मत्त सण्णि आहारए चेदि ॥ २ ॥

गम्यत इति गतिः। एदीए णिरुत्तीए गाम-णयर-खेड-कव्वडादीणं पि गदित्तं पसज्जदे ? ण, रूढिबलेण गदिणामकम्मणिप्पाइयपज्जायम्मि गदिसद्दपवुत्तीदो[2]। गदि-कम्मोदयाभावा सिद्धिगदी अगदी। अथवा, भवाद् भवसंक्रांतिर्गतिः असंक्रांतिः सिद्धिगतिः। स्वविषयनिरतानीन्द्रियाणि, स्वार्थनिरतानीन्द्रियाणीत्यर्थः। अथवा, इन्द्र आत्मा, इन्द्रस्य लिङ्गमिन्द्रियम्। आत्मप्रवृत्त्युपचितपुद्‌गलपिंडः कायः, पृथ्वीकायादि-नामकर्मजनितपरिणामो वा कार्य-कारणोपचारेण कायः, चीयन्ते अस्मिन् जीवा इति व्युत्पत्तेर्वा कायः। आत्मप्रवृत्तिसंकोचविकोचो[3] योग., मनोवाक्कायावष्टंभबलेन जीव-

---

जाने पर आचार्य अगला सूत्र कहते हैं—

गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी और आहारक, ये चौदह मार्गणास्थान हैं ॥ २ ॥

जहांको गमन किया जाय वह गति है।

शंका—गतिकी इस प्रकार निरुक्ति करनेसे तो ग्राम, नगर, खेडा, कर्वट आदि स्थानोंको भी गति पना प्राप्त होता है ?

समाधान—नहीं क्योंकि, रूढिके बलसे गतिनामकर्म द्वारा जो पर्याय निष्पन्न की गई है उसीमें गति शब्दका प्रयोग किया जाता है। गतिनामकर्मके उदयके अभावके कारण सिद्धिगति होती है वह अगति कहलाती है। अथवा, एक भवसे दूसरे भवमें संक्रान्तिका नाम गति है, और एक भवसे दूसरे भवके लिये संक्रान्तिका न होना सिद्धि गति है।

जो अपने अपने विषयमें निरत हों वे इन्द्रियां हैं, अर्थात् अपने अपने विषयरूप पदार्थोंमें रमण करनेवाली इन्द्रियां कहलाती हैं। अथवा इन्द्र आत्माको कहते हैं, और इन्द्रोके लिंगका नाम इन्द्रिय है। आत्माकी प्रवृत्ति द्वारा उपचित किये गये पुद्‌गलपिंडको काय कहते हैं। अथवा, पृथिवीकाय आदि नामकर्मोके द्वारा उत्पन्न परिणामको कार्यमें कारणके उपचारसे काय कहा है। अथवा, 'जिसमें जीवोंका सचय किया जाय' ऐसी व्युत्पत्तिसे काय बना है। आत्माकी प्रवृत्तिसे उत्पन्न संकोच-विकोचका नाम योग है, अर्थात् मन, वचन और कायके अवलम्बनसे जीवप्रदेशोंमें परिस्पन्दन होनेको योग कहते

---

१ स. प्रती भविए इति पाठो नास्ति। २ अ. सा. प्रत्योः सद्दपवुत्तीदो इति पाठः।

३ अ. सा. प्रत्योः प्रवृत्तिसंकोच, मु. प्रती आत्मप्रवृत्तेस्संकोचो इति पाठः।

प्रदेशपरिस्पन्दो योग इति यावत् । आत्मप्रवृत्तेर्मैथुनसंमोहोत्पादो वेदः । सुख-दुःखबहुसस्यं कर्मक्षेत्रं कृषन्तीति कषायाः । भूतार्थप्रकाशकं ज्ञानं तत्त्वार्थोपलंभकं वा । व्रत-समिति-कषाय-दंडेन्द्रियाणां रक्षण-पालन-निग्रह-त्याग-जयाः संयमः, सम्यक् यमो वा संयमः । प्रकाशवृत्तिर्दर्शनम् । आत्मप्रवृत्तिसंश्लेषणकरी लेश्या, अथवा लिम्पतीति लेश्या । निर्व्वाणपुरस्कृतो भव्यः, तद्विपरीतोऽभव्यः । तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्, अथवा तत्त्वरुचिः सम्यक्त्वम्, अथवा प्रशम-संवेगानुकम्पास्तिक्याभिव्यक्तिलक्षणं[1] सम्यक्त्वम् । शिक्षाक्रियोपदेशालापग्राही[2] संज्ञी, तद्विपरीतः असंज्ञी । शरीरप्रायोग्य-पुद्गलपिंडग्रहणमाहारः, तद्विपरीतमनाहारः । एदेसु जीवा मग्गिज्जंति त्ति एदेसिं मग्गणाओ इदि सण्णा ।

गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइया बंधा ॥ ३ ॥

हैं । आत्माकी प्रवृत्तिसे मैथुनरूप सम्मोहकी उत्पत्तिका नाम वेद है । सुख-दुखरूपी खूब फसल उत्पन्न करनेवाले कर्मरूपी क्षेत्रका जो कर्षण करते हैं वे कषाय हैं । जो यथार्थ वस्तुका प्रकाशक है, अथवा जो तत्त्वार्थ प्राप्त करानेवाला है, वह ज्ञान है । व्रतरक्षण, समितिपालन, कषायनिग्रह, दंडत्याग और इन्द्रियजयका नाम संयम है, अथवा सम्यक् रूपसे यमका नाम संयम कहते है । प्रकाशरूपवृत्तिका नाम दर्शन है। आत्मप्रवृत्तीमें संश्लेषण करनेवाली लेश्या है । अथवा लिंपन न करनेवाली लेश्या है । जिस जीवने निर्वाणको पुरस्कृत किया है अर्थात् अपने सन्मुख रखा है वह भव्य है, और उससे विपरीत अर्थात् निर्वाणको पुरस्कृत नहीं करनेवाला जीव अभव्य है । तत्त्वार्थके श्रद्धानका नाम सम्यग्दर्शन है । अथवा, तत्त्वोंमें रुचि होना ही सम्यक्त्व है । अथवा प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और आस्तिक्यकी अभिव्यक्ति ही जिसका लक्षण है वही सम्यक्त्व है । शिक्षा, क्रिया, उपदेश और आलापको ग्रहण करनेवाला जीव संज्ञी है; उससे विपरीत अर्थात् शिक्षा, क्रियादिको ग्रहण नहीं कर सकनेवाला जीव असंज्ञी है । शरीर बनानेके योग्य पुद्गलपिंडको ग्रहण करना ही आहार है; उससे विपरीत अर्थात् शरीरके योग्य पुद्गलपिंडको ग्रहण नहीं करना अनाहार है ।

इन्हीं पूर्वोक्त चौदह स्थानोंमें जीवोंकी मार्गणा अर्थात् खोज की जाती है, इसीलिये इनका नाम मार्गणा है ।

गतिमार्गणाके अनुसार नरकगतिमें नारकी जीव बन्धक हैं ॥ ३ ॥

---

१ अ. क. स. प्रतिषु अनुकम्पा इति पाठो नास्ति ।

२ क. प्रती. ग्राही इति पाठः ।

बंधा बंधया[1] त्ति वुत्तं होदि । कुदो ? दोण्हं पि पदाणमेक्ककारये णिप्पत्तीदो ।

तिरिक्खा बंधा ॥ ४ ॥

कुदो ? मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगाणं बंधकारणाणं तत्थुवलंभादो । एत्थ तिरिक्खगदीए इदि किण्ण वुत्तं ? ण एस दोसो, अत्थावत्तीए तदुवलंभादो ।

देवा बंधा ॥ ५ ॥

सुगममेदं ।

मणुसा बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ ६ ॥

मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगाणं बंधकारणाणं सव्वेसिमजोगिम्हि अभावा अजोगिणो अबंधया । सेसा सव्वे मणुस्सा बंधया, मिच्छत्तादिबंधकारणसंजुत्तत्तादो ।

सिद्धा अबंधा ॥ ७ ॥

यहां सूत्रोक्त ' बन्ध ' शब्दसे बन्धकका ही अभिप्राय है, क्योंकि, बन्ध और बन्धक इन दोनों पदोंकी एक ही कारकमें निष्पत्ति है । अर्थात् ये दोनों ही शब्द ' बन्ध् ' धातुसे कर्ता कारकके अर्थमें क्रमशः ' अच् ' व ' ण्वुल् ' प्रत्यय लगकर बने हैं ।

तिर्यंच बन्धक हैं ॥ ४ ॥

क्योंकि, उनमे बन्धके कारणभूत मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग पाये जाते हैं ।

शंका—यहां सूत्रमें ' तिरिक्खगदीए ' अर्थात् ' तिर्यंच गतिमें ' ऐसा पद क्यों नहीं कहा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, अर्थापत्ति न्यायसे उस अर्थकी उपलब्धि हो जाती है ।

देव बंधक हैं ॥ ५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मनुष्य बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं ॥ ६ ॥

कर्मबन्धके कारणभूत मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग, इन सबका अयोगिकेवली गुणस्थानमें अभाव होनेसे अयोगी जिन अबन्धक हैं । शेष सब मनुष्य बन्धक हैं, क्योंकि, वे मिथ्यात्वादि बन्धके कारणोंसे संयुक्त पाये जाते हैं ।

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ ७ ॥

---

१ मु. प्रतौ बंधा बंधया इति पाठो नास्ति ।

कुदो? बंधकारणवदिरित्तमोक्खकारणेहि संजुत्तत्तादो काणि पुण बंधकारणाणि, बंध-बंधकारणावगमेण विणा मोक्खकारणावगमाभावा। वुत्तं च---

जे बंधयरा भावा मोक्खयरा भावि जे दु अज्झप्पे।
जे चावि बंधमोक्खे अकराया ते वि विण्णेया ॥ १ ॥

तदो बंधकारणाणि वत्तव्वाणि? मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगा बंधकारणाणि[1]। सम्मद्दंसण-संजमाकसायाजोगा मोक्खकारणाणि। वुत्तं च---

मिच्छत्ताविरदी वि य कसायजोगा य आसवा होंति।
दंसण-विरमण-णिग्गह-णिरोहया संवरो[2] होंति ॥ २ ॥

जदि चत्तारि चेव मिच्छत्तादीणि बंधकारणाणि होंति तो---

ओदइया बंधयरा उवसम-खय-मिस्सया य मोक्खयरा।
भावो दु पारिणामिओ करणोभयवज्जियो होन्ति ॥ ३ ॥

क्योंकि, सिद्ध बन्धकारणोंसे व्यतिरिक्त मोक्षके कारणोंसे संयुक्त होते हैं।

शंका--- बन्धके कारण कौनसे हैं, क्योंकि बन्ध और बन्धके कारण जाने बिना मोक्षके कारणोंका ज्ञान नहीं हो सकता। कहा भी है---

अध्यात्ममें जो बन्धके उत्पन्न करनेवाले भाव हैं और जो मोक्षको उत्पन्न करनेवाले भाव हैं, तथा जो बन्ध और मोक्ष दोनोंको नहीं उत्पन्न करनेवाले भाव हैं वे सब भाव जानने योग्य हैं ॥ १ ॥

अतएव बन्धके कारण बतलाना चाहिये?

समाधान--- मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग, ये चार बन्धके कारण हैं। और सम्यग्दर्शन, संयम, अकषाय और अयोग, ये चार मोक्षके कारण हैं। कहा भी है---

मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ये कर्मोंके आस्रव भाव हैं अर्थात् कर्मोंके आगमनद्वार है। तथा सम्यग्दर्शन, संयम अर्थात् विषयविरक्ति, कषायनिग्रह और मन-वचन-कायका निरोध ये संवर अर्थात् कर्मोंके निरोधक भाव हैं ॥ २ ॥

शंका--- यदि ये ही मिथ्यात्वादि चार बन्धके कारण हैं तो---

औदायिक भाव बन्ध करनेवाले हैं औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव मोक्षके कारण हैं, तथा पारिणामिक भाव बन्ध और मोक्ष दोनोंके कारणसे रहित हैं ॥ ३ ॥

---

१ सामण्णपच्चया खलु चउरो भण्णंति बंधकत्तारो। मिच्छत्तं अविरमणं कसाय-जोगा य बोद्धव्वा ॥ समयसार ११६.   २ मू. प्रतौ संवरा इति पाठः।

एदीए सुत्तगाहाए सह विरोहो होदि त्ति वुत्ते ण होदि, ओदइया बंधयरा त्ति वुत्ते ण सव्वेसिमोदइयाणं भावाणं गहणं, गदि-जादिआदीणं पि ओदइयभावाणं बंधकारणत्तप्पसंगा। देवगदीउदएण वि काओ वि पयडीयो बज्झमाणियाओ दीसंति, तासिं देवगदिउदओ किण्ण कारणं होदि त्ति वुत्ते ण होदि, देवगदिउदयाभावेण तासिं णियमेण बंधाभावाणुवलंभादो। 'जस्स अण्णय-वदिरेगेहि णियमेण जस्सण्णय-वदिरेगा उवलंभंति तं तस्स कज्जमियरं च कारणं' इदि णायादो मिच्छत्तादीणि चेव बंधकारणाणि।

तत्थ मिच्छत्त-णवुंसयवेद-णिरयाउ-णिरयगइ-एइंदिय-बीइंदिय-तीइंदिय-चदुरिंदियजादि-हुंडसंठाण-असंपत्तसेवट्टसरीरसंघडण-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी-आदाव थावर-सुहुम अपज्जत्त-साहारणाणं सोलसण्हं पयडीणं बंधस्स मिच्छत्तुदओ कारणं, तदुदयण्णयवदिरेगेहि सोलसपयडीबंधस्स अण्णयवदिरेगाणमुवलंभादो। णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धी-

---

इस सूत्रगाथाके साथ विरोध उत्पन्न होता है।

समाधान—ऐसा कहनेपर कहते हैं कि विरोध नहीं उत्पन्न होता है क्योंकि 'औदयिक भाव बन्धके कारण हैं' ऐसा कहनेपर सभी औदयिक भावोंका ग्रहण नहीं किया है, क्योंकि वैसा माननेपर गति, जाति, आदि नामकर्मसम्बन्धी औदयिक भावोंके भी बन्धके कारण होनेका प्रसंग आ जायगा।

शंका—देवगतिके उदयके साथ भी कितनी ही प्रकृतियोंका बन्ध होना देखा जाता है, फिर देवगतिका उदय उनका कारण क्यों नहीं होता?

समाधान—ऐसा कहनेपर कहते हैं कि उनका कारण देवगतिका उदय नहीं होता, क्योंकि देवगतिके उदयके अभावमें नियमसे उनके बन्धका अभाव नहीं पाया जाता। "जिसके अन्वय और व्यतिरेकके साथ नियमसे जिसके अन्वय और व्यतिरेक पाये जावें वह उनका कार्य और दूसरा कारण होता है" (अर्थात् जब एकके सद्भावमें दूसरेका सद्भाव और उसके अभावमें दूसरेका भी अभाव पाया जावे तभी उनमें कार्य-कारणभाव संभव हो सकता है, अन्यथा नहीं।) इस न्यायसे मिथ्यात्व आदिक ही बन्धके कारण हैं।

इन कारणोंमें मिथ्यात्व नपुंसकवेद, नरकायु, नरकगति, एकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय जाति, हुंडसंस्थान, असंप्राप्तसृपाटिका शरीरसंहनन, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इन सोलह प्रकृतियोंके बन्धका मिथ्यात्वोदय कारण है, क्योंकि मिथ्यात्वोदयके अन्वय और व्यतिरेकके साथ इन सोलह प्रकृतियोंके बन्धका अन्वय और व्यतिरेक पाया जाता है।

निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि, अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और

अणंताणुबंधिकोध-माण-माया-लोभा-इत्थिवेद-तिरिक्खाउ-तिरिक्खगदी-णग्गोह-सादि-खुज्ज वामणसरीरसंठाण- वज्जणारायण-णारायण अद्धणारायण-खीलियसरीरसंघडण-तिरिक्खगदीपाओग्गाणुपुव्वी -उज्जोव-अप्पसत्थविहायगदि-दुभग-दुस्सर-अणादेज्ज-णीचागोदाणं-बंधस्स अणंताणुबंधिचउक्कस्स उदयो कारणं। कुदो ? तदुदयअण्णय-वदिरेगेहिमेदासिं पयडीणं बंधस्स अण्णय-वदिरेगाणं उवलंभादो। अपच्चक्खाणावरणीयकोध-माण-माया-लोभ-मणुस्साउ-मणुस्सगदी -ओरालियसरीर-अंगोवंग-वज्जरिसहसंघडण-मणुस्सगदीपाओग्गाणुपुव्वीणं बंधस्स अपच्चक्खाणावरणचदुक्कस्स उदओ कारणं, तेण विणा एदासिं बंधाणुवलंभा। पच्चक्खाणावरणीयकोध-माण-माया-लोभाणं बंधस्स एदासिं चेव उदओ कारणं, सोदएण विणा एदासिं बंधाणुवलंभा। असादावेदणीय-अरदि-सोग-अथिर-असुह-अजसकित्तीणं बंधस्स पमादो कारणं, पमादेण विणा एदासिं बंधाणुवलंभा। को पमादो णाम? चदुसंजलणणवणोकसायाणं तिव्वोदओ। चदुण्हं बंधकारणाणं मज्झे कत्थ

लोभ स्त्रीवेद, तिर्यंचायु, तिर्यंचगति, न्यग्रोध, स्वाति, कुब्जक और वामन शरीरसंस्थान, वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच और कीलित शरीरसंहनन, तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीच गोत्र इन प्रकृतियोंके बन्धका अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उदय कारण है, क्योंकि उसीके उदयके अन्वय और व्यतिरेकके साथ इन प्रकृतियोंका भी अन्वय और व्यतिरेक पाया जाता है।

अप्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान, माया और लोभ, मनुष्यायु, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, वज्रऋषभसंहनन और मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी इन दश प्रकृतियोंके बन्धका अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कका उदय कारण है क्योंकि उसके बिना इन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं पाया जाता।

प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध, मान माया और लोभ इन चार प्रकृतियोंके बन्धका कारण इन्हींका उदय है, क्योंकि अपने उदयके बिना इनका बन्ध नहीं पाया जाता।

असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इन छह प्रकृतियोंके बन्धका कारण प्रमाद है, क्योंकि प्रमादके बिना इन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं पाया जाता।

शंका— प्रमाद किसे कहते हैं ?

समाधान— चार संज्वलन कषाय और नव नोकषाय इन तेरहके तीव्र उदयका नाम प्रमाद है।

शंका— पूर्वोक्त चार बन्धके कारणोंमें प्रमादका कहां अन्तर्भाव होता है ?

पमादस्संतब्भावो ? कसायेसु, कायवदिरित्तपमादाणुवलंभादो। देवाउवबंधस्स वि कसाओ चेव कारणं, पमादहेदुकसायस्स उदयाभावेण अप्पमत्तो होदूण मंदकसाउदएण परिणदस्स देवाउअबंधविणासुवलंभा। णिद्दा-पयलाणं पि बंधस्स कसाउदओ चेव कारणं, अपुव्वकरणद्धाए पढमसत्तमभाए संजलणाणं तप्पाओग्गतिव्वोदए एदासिं बंधुवलंभादो। देवगइ -पंचिंदियजादि-वेउव्विय-आहार-तेजा-कम्मइयसरीर-समचउरससरीरसंठाण -वेउव्विय-आहारसरीरअंगोवंग-वण्ण-गंध-रस-फास-देवगइपाओग्गाणुपुव्वी-अगुरुअलहुअ -उवघाद -परघाद-उस्सास -पसत्थविहायगदि तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर -थिर-सुह -सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-णिमिण-तित्थयराणं पि बंधस्स कसाउदओ चेव कारणं, अपुव्वकरणद्धाए छसत्तभागचरिमसमए मंदयरकसाउदएण सह बंधुवलंभादो। हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं-बंधस्स अधापवत्तापुव्वकरणणिबंधणकसाउदओ कारणं, तत्थेव एदासिं बंधवलंभादो। चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं बंधस्स बादरकसाओ कारणं, सुहुमकसाए एदासिं बंधाणुवलंभा।

समाधान—कषायोंमें प्रमादका अन्तर्भाव होता है, क्योंकि कषायोंसे पृथक् प्रमाद नहीं पाया जाता।

देवायुके बन्धका भी कषाय ही कारण है, क्योंकि, प्रमादके हेतुभूत कषायके उदयके अभावसे अप्रमत्त होकर मन्द कषायके उदयरूपसे परिणत हुए जीवके देवायुके बन्धका विनाश पाया जाता है। निद्रा और प्रचला इन दो प्रकृतियोंके भी बन्धका कारण कषायोदय ही है, क्योंकि, अपूर्वकरणकालके प्रथम सप्तम भागमें संज्वलन कषायोंके उस कालके योग्य तीव्रोदय होने पर इन प्रकृतियोंका बन्ध पाया जाता है। देवगति, पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, आहारकशरीरांगोपांग, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थंकर, इन तीस प्रकृतियोंके भी बन्धका कषायोदय ही कारण है, क्योंकि, अपूर्वकरणकालके सात भागोंमेंसे प्रथम छह भागोंके अन्तिम समयमें मन्दतर कषायोदयके साथ इनका बन्ध पाया जाता है। हास्य, रति, भय, और जुगुप्सा, इन चारके बन्धका अधःप्रवृत्त और अपूर्वकरणनिमित्तक कषायोदय कारण है, क्योंकि उन्हीं दोनों परिणामोंके कालमें रहनेवाले कषायोदयमें ही इन प्रकृतियोंका बन्ध पाया जाता है।

चार संज्वलन कषाय और पुरुषवेद इन पांच प्रकृतियोंके बन्धका बादर कषाय कारण है, क्योंकि, सूक्ष्मकषायके सद्भावमें इनका बन्ध नहीं पाया जाता। पांच ज्ञाना-

पंचणाणावरणीय-चदुदंसणावरणीय-जसगित्ति-उच्चागोद-पंचंतराइयाणंबंधस्स सामण्णो[1] कसाउदओ कारणं कसायाभावे एदासिं बंधाणुवलंभा । सादावेदणीयबंधस्स जोगो चेव कारणं मिच्छत्तासंजम-कसायाणमभावे वि जोगेणेक्केण चेवेदस्स बंधुवलंभादो तदभावे तदणुवलंभादो । ण च एदाहितो वदिरित्ताओ अण्णाओ बंधपयडीओ अत्थि जेण तासिमण्णं पच्चयंतरं होज्ज ।

असंजमो वि पच्चओ पठिदो, सो काणं पयडीणं बंधस्स कारणमिदि ? ण, संजमघादिकम्मोदयस्सेव असंजमववदेसादो । असंजमो जदि कसाएसु चेव पददि[2] तो पुध तदुवदेसो किमट्ठं कीरदे ? ण एस दोसो, ववहारणयं पडुच्च तदुवदेसादो । एसा पज्जवट्ठियणयमस्सिऊण पच्चयपरूवणा कदा । दव्वट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे बंधकारणमेयं चेव, चदुपच्चयसमूहादो[3] बंधकज्जुप्पत्तीए । तम्हा एदे बंधपच्चया । एदेसिं

वरणीय, चार दर्शनावरणीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तराय, इन सोलह प्रकृतियोंका सामान्य कषायोदय कारण है, क्योंकि, कषायोंके अभावमें इन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं पाया जाता । सातावेदनीयके बन्धका योग ही कारण है, क्योंकि, मिथ्यात्व, असंयम, और कषाय इनका अभाव होनेपर भी अकेले योगके साथ ही इस प्रकृतिका बन्ध पाया जाता है और योगके अभावमें इस प्रकृतिका बन्ध नहीं पाया जाता । और इनके अतिरिक्त अन्य कोई बन्ध योग्य प्रकृतियां नहीं है जिससे कि उनका कोई अन्य कारण हो ।

शंका—असंयम भी बन्धका कारण कहा गया है, सो वह किन प्रकृतियोंके बन्धका कारण है ?

समाधान—यह शंका ठीक नहीं, क्योंकि संयमके घातक कषायरूप चारित्रमोहनीय कर्मके उदयका ही नाम असंयम है ।

शंका—यदि असंयम कषायोंमें ही अन्तर्भूत होता है, फिर उसका पृथक् उपदेश किसलिये किया जाता है ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं क्योंकि व्यवहारनयकी अपेक्षासे उसका पृथक उपदेश किया गया है । बन्धकारणोंकी यह प्ररूपणा पर्यायार्थिकनयका आश्रय करके की गयी है । पर द्रव्यार्थिकनयका अवलम्बन करनेपर तो बन्धका कारण केवल एक ही है, क्योंकि, कारणचतुष्कके समूहसे ही बंधरूप कार्य उत्पन्न होता है ।

इस कारण ये ही बंधके कारण हैं । इनके प्रतिपक्षी सम्यक्त्वोत्पत्ति, देशसंयम,

---

१ मु. प्रतौ. पंचंतराइयाणं सामण्णो इति पाठः । २ अ. स. पदिद प्रत्यां: इति पाठः ।

३ स. प्रतौ -समूहादो इति पाठः

पडिवक्खा सम्मत्तुप्पत्ती-देससंजम-संजम-अणंताणुबंधिविसंजोयण-दंसणमोहक्खवण-चरित्तमोहुवसामणुवसंतकसाय-चरित्तमोहक्खवण-खीणकसाय सजोगिकेवलीपरिणामा मोक्खपच्चया, एदेहिंतो समयं पडि असंखेज्जगुणसेडीए कम्मणिज्जरुवलंभादो। जे पुण पारिणामियभावा जीव-भव्वाभव्वादओ, ण ते बंधमोक्खाणं कारणं तेहिंतो तदणुवलंभा।

एदस्स कम्मस्स खएण सिद्धाणमेसो गुणो समुप्पण्णो त्ति जाणावणट्ठमेदाओ गाहाओ एत्थ परूविज्जंति--

दव्व-गुण-पज्जए जे जस्सुदएण य ण जाणदे जीवो।
तस्स क्खएण सो च्चिय जाणदि सव्वं तयं जुगवं ॥ ४ ॥
दव्व-गुण-पज्जए जे जस्सुदएण य ण पस्सदे जीवो।
तस्स क्खएण सो च्चिय पस्सदि सव्वं तयं जुगवं ॥ ५ ॥
जस्सोदएण जीवो सुहं व दुक्खं व दुविहमणुहवइ।
तस्सोदयक्खएण दु जायदि अप्पत्थणंतसुहो ॥ ६ ॥
मिच्छत्त-कसायासंजमेहि जस्सोदएण परिणमइ।
जीवो तस्सेव खया त्तव्विवरीदे गुणे लहइ ॥ ७ ॥

संयम, अनन्तानुबन्धिविसंयोजन, दर्शनमोहक्षपण चारित्रमोहोपशमन उपशान्तकषाय, चारित्रमोहक्षपण, क्षीणकषाय और सयोगिकेवली ये परिणाम मोक्षके कारणभूत हैं, क्योंकि, इनके निमित्तसे प्रतिसमय असंख्यातगुणश्रेणीरूपसे कर्मोंकी निर्जरा पायी जाती है। किन्तु जीवत्व भव्यत्व अभव्यत्व आदि जो पारिणामिक भाव हैं, वे बन्ध और मोक्ष दोनोंमेंसे किसीके भी कारण नहीं हैं क्योंकि उनके द्वारा बन्ध या मोक्षकी प्राप्ति नहीं होती।

'इस कर्मके क्षयसे सिद्धोंके यह गुण उत्पन्न हुआ है' इस बातका ज्ञान करानेके लिये ये गाथायें यहां प्ररूपित की जाती हैं--

जिस ज्ञानावरणीय कर्मके उदयसे जीव जिन द्रव्य, गुण और पर्याय इन तीनोंको नहीं देखता है, उसी दर्शनावरणीय कर्मके क्षयसे वही जीव उन सभी तीनोंको एक साथ देखने लगाता है ॥ ४ ॥

जिस दर्शनावरणीय कर्मके उदयसे जीव जिन द्रव्य गुण और पर्याय इन तीनोंको देखता है, उसी दर्शनावरणीय कर्मके क्षयसे वही जीव उन सभी तीनोंको एक साथ देखने लगता है ॥ ५ ॥

जिस वेदनीय कर्मके उदयसे जीव सुख और दुःख इस दो प्रकारकी अवस्थाका अनुभव करता है उस कर्मके उदयके क्षयसे आत्मोत्थ अनंतसुख उत्पन्न होता है ॥ ६ ॥

जिस मोहनीय कर्मके उदयसे जीव मिथ्यात्व, कषाय और असंयमरूपसे परिणमन करता है, उसी मोहनीयके क्षयसे इनके विपरीत गुणोंको प्राप्त करता है ॥ ७ ॥

जस्सोदएण जीवो अणुसमयं मरदि जीवदि वराओ ।
तस्सोदयक्खएण दु भव-मरणविवज्जियो होइ ॥ ८ ॥
अंगोवंग-सरीरिंदिय-मणुस्सासजोगणिप्फत्ती ।
जस्सोदएण सिद्धो तण्णामखएण असरीरो ॥ ९ ॥
उच्चुच्च उच्च तह उच्चणीच णीचुच्च णीच णीचं
जस्सोदएण भावो[1] णीचुच्चविवज्जिदो तस्स ॥ १० ॥
विरियोवभोग-भोगे दाणे लाभे जदुदयदो विग्घं ।
पंचविहलद्धिजुत्तो तक्कम्मखया हवे सिद्धा ॥ ११ ॥
जयमंगलभूदाणं विमलाणं णाण-दंसणमयाणं ।
तेलोक्कसेहराणं णमो सया[2] सव्वसिद्धाणं ॥ १२ ॥

इंदियाणुवादेण एइंदिया बंधा बीइंदिया बंधा तीइंदिया बंधा चदुरिंदिया बंधा ॥ ८ ॥

कुदो ? एदेसु मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगाणमण्णयं मोत्तूण वदिरेगाभावा ।

जिस आयु कर्मके उदयसे बेचारा जीव प्रतिसमय मरता और जीता है उसी कर्मके उदयक्षयसे वह जीव जन्म और मरणसे रहित हो जाता है ॥ ८ ॥

जिस नाम कर्मके उदयसे अंगोपांग, शरीर, इन्द्रिय, मन और उच्छ्वाससे योग्य निष्पत्ति होती है, उसी नाम कर्मके क्षयसे सिद्ध अशरीरी होते हैं ॥ ९ ॥

जिस गोत्र कर्मके उदयसे जीव उच्चोच्च, उच्चनीच, नीचोच्च, नीच वा नीचनीच भावको प्राप्त होता है, उसी गोत्र कर्मके क्षयसे वह जीव नीच और ऊंच भावोंसे मुक्त होता है ॥ १० ॥

जिस अन्तराय कर्मके उदयसे जीवके वीर्य, उपभोग, भोग, दान और लाभमें विघ्न उत्पन्न होता है, उसी कर्मके क्षयसे सिद्ध पंचविध लब्धिसे संयुक्त होते हैं ॥ ११ ॥

जो जगमें मंगलभूत हैं, विमल हैं, ज्ञान-दर्शनमय हैं, और त्रैलोक्यके शेखर-रूप हैं ऐसे समस्त सिद्धोंको मेरा सदा नमस्कार हो ॥ १२ ॥

इन्द्रियमार्गणाके अनुसार एकेन्द्रिय जीव बन्धक हैं, द्वीन्द्रिय जीव बन्धक हैं, त्रीन्द्रिय जीव बन्धक हैं और चतुरिन्द्रिय जीव बन्धक हैं ॥ ८ ॥

क्योंकि उक्त जीवोंमें (कर्मबन्धके कारणभूत) मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग इनके अन्वयको छोड़कर व्यतिरेकका अभाव है, अर्थात् उन जीवोंमें बन्धके कारणोंका सद्भाव ही पाया जाता है, असद्भाव नहीं ।

---

१ मु. प्रतौ भावो इति पाठः । २ मु. प्रतौ सिया इति पाठः ।

पंचिंदिया बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ ९ ॥

कुदो ? मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलित्ति बंधा चेव, तत्थ बंधकारण-मिच्छत्तादीणमुवलंभादो। अजोगिकेवली अबंधा चेव, मिच्छत्तादिबंधकारणाणं सव्वेसि-मभावा तेण पंचिंदिया बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि त्ति भणिदं। सजोगि-अजोगिकेवलीणं केवलणाण-दंसणेहि दिट्ठासेसपमेयाणं करणवावारविरहियाणं कधं पंचि-दियत्तं ? ण एस दोसो, पंचिंदियणामकम्मोदयं पडुच्च तेसिं तव्ववएसादो।

अणिंदिया अबंधा ॥ १० ॥

कुदो ? सिद्धेसु णिरंजणेसु सयलबंधाभावादो, णिरामएसु बंधकारणाभावा।

कायाणुवादेण पुढवीकाइया बंधा आउकाइया बंधा तेउकाइया बंधा वाउकाइया बंधा वणप्फदिकाइया बंधा ॥ ११ ॥

पंचेन्द्रिय जीव बन्धक भी हैं, अबन्धक भी हैं ॥ ९ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली तकके जीव तो बन्धक ही हैं, क्योंकि, उनमें बन्धके कारणभूत मिथ्यात्वादि पाये जाते हैं। किन्तु आयोगिकेवली अबन्धक ही हैं, क्योंकि उनमें मिथ्यात्व आदि सभी बन्धके कारणोंका अभाव है। इसलिये 'पंचेन्द्रिय जीव बन्धक भी हैं, अबन्धक भी हैं' ऐसा कहा गया है।

शंका—जिन्होंने केवलज्ञान और केवलदर्शनसे समस्त प्रमेय अर्थात् ज्ञेय पदार्थोंको देख लिया है और जो करण अर्थात् इन्द्रियोंके व्यापारसे रहित है, ऐसे सयोगी और अयोगी केवलियोंको पंचेन्द्रिय कैसे कह सकते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, उनमें पंचेन्द्रिय नामकर्मका उदय विद्यमान है, अतः उसकी अपेक्षासे उन्हें पंचेन्द्रिय कहा गया है।

अनिन्द्रिय जीव अबन्धक हैं ॥ १० ॥

क्योंकि, निरंजन सिद्धोंमें समस्त बन्धका अभाव है, चूंकि निरामय अर्थात् निर्विकार जीवोंमें बन्धका कोई कारण नहीं रहता।

कायमार्गणानुसार पृथिवीकायिक जीव बन्धक हैं, अप्कायिक जीव बन्धक हैं, तेजस्कायिक जीव बन्धक हैं, वायुकायिक जीव बन्धक हैं और वनस्पतिकायिक जीव बन्धक हैं ॥ ११ ॥

सुगममेदं ।

तसकाइया बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ १२ ॥

कुदो ? मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति तसकाइएसु बंधकारणुवलंभा, अजोगिकेवलिम्हि तदणुवलंभादो ।

अकाइया अबंधा ॥ १३ ॥

सुगममेदं ।

जोगाणुवादेण मणजोगि-वचिजोगि-कायजोगिणो बंधा ॥ १४ ॥

एदं पि सुगमं ।

अजोगी अबंधा ॥ १५ ॥

जोगो णाम किं? मण-वयण-कायपोग्गलालंबणेण जीवपदेसाणं परिप्फंदो । जदि एवं तो णत्थि अजोगिणो, सकिरियस्स[1] जीवदव्वस्स अकिरियत्तविरोहादो । ण एस दोसो,

---

यह सूत्र सुगम है ।

त्रसकायिक जीव बन्धक भी हैं, अबन्धक भी हैं ॥ १२ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली तकके त्रसकायिक जीवोंमें बन्धके कारणभूत मिथ्यात्वादि पाये जाते हैं, किन्तु अयोगिकेवलीमें वे बन्धके कारण नहीं पाये जाते ।

अकायिक जीव अबन्धक हैं ।

यह सूत्र सुगम है ।

योगमार्गणानुसार मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी बन्धक हैं ॥ १४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अयोगी जीव अबन्धक हैं ॥ १५ ॥

शंका—योग किसे कहते हैं ?

समाधान—मन, वचन और काय सम्बन्धी पुद्गलोंके आलम्बनसे जो जीवप्रदेशोंका परिस्पन्दन होता है वही योग है ।

शंका—यदि ऐसा है तो अयोगी जीव नहीं होते, क्रियासहित जीवद्रव्यको अक्रिय माननेमें विरोध आता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि आठों कर्मोंके क्षीण हो जानेपर जो

---

१ मू. प्रतौ सरीयस्स इति पाठः ।

अट्ठकम्मेसु खीणेसु जा उड्ढगमणुवलंबिया किरिया सा जीवस्स साहाविया, कम्मोदएण विणा पउत्तत्तादो। सट्ठिददेसमछंडिय छंडित्ता ? वा जीवदव्वस्स सावयवेहि परिप्फंदो अजोगो' णाम, तस्स कम्मक्खयत्तादो। तेण सकिरिया वि सिद्धा' अजोगिणो, जीवपदेसाणमद्दहिदजलपदेसाणं व उव्वत्तण-परियत्तणकिरियाभावादो। तदो ते अबंधा त्ति' भणिदा।

वेदाणुवादेण इत्थिवेदा बंधा, पुरिसवेदा बंधा, णवुंसयवेदा बंधा ॥ १६ ॥

सुगममेदं।

अवगदवेदा बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ १७ ॥

सकसायजोगेसु अकसायजोगेसु च अवगयवेदत्तुवलंभा।

ऊर्ध्वगमनोपलम्बी क्रिया होती है वह जीवका स्वाभाविक क्रिया है क्योंकि वह कर्मोदयके विना प्रवृत्त होती है। स्वस्थित प्रदेशको न छोडते हुए अथवा छोडकर जो जीवद्रव्यका अपने अवयवों द्वारा परिस्पन्द होता है वह अयोग है, क्योंकि वह कर्मक्षयसे उत्पन्न होता है। अतः सक्रिय होते हुए भी शरीरी जीव अयोगी सिद्ध होते हैं, क्योंकि उनके जीवप्रदेशोंके तप्तायमान जलप्रदेशोंके सदृश उद्वर्तन और परिवर्तनरूप क्रियाका अभाव है। इसीलिये अयोगियोंको अबन्धक कहा है।

वेदमार्गणानुसार स्त्रीवेदी जीव बन्धक हैं, पुरुषवेदी जीव बन्धक हैं और नपुंसकवेदी जीव बन्धक हैं ॥ १६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

अपगतवेदी बन्धक भी हैं, अबन्धक भी हैं ॥ १७ ॥

क्योंकि, कषाय व योग सहित तथा कषाय व योग रहित जीवोंमें अपगतवेदत्व पाया जाता है

विशेषार्थ—नौवेके अवेदभागसे गुणस्थान यद्यपि अपगत वेदियोंके हैं, तो भी उनमें दसवें गुणस्थानतक कषाय व तेरहवें गुणस्थानतकके योगका सद्भाव होनेसे कर्मबन्ध होता ही है और इस प्रकार इन गुणस्थानोंके जीव अपगतवेदी होनेपर भी बन्धक हैं। चौदहवें गुणस्थानमें बंधका अन्तिम कारण योग भी नहीं रहता और इस कारण गुणस्थानके अपगतवेदी जीव अबन्धक हैं।

---

१ प्रतिषु इति जोगो पाठः।　　२ कअती विति इति पाठः।

३ अ. क. प्रत्योः। अबंधो त्ति इति पाठः।

सिद्धा अबंधा ॥ १८ ॥

अवगदवेदत्तं सिद्धेसु वि अत्थि जेण कारणेण तेण अवगदवेदपरूवणाए चेव सिद्धा वि पहविट्ठा त्ति सिद्धाणं पुधपरूवणा णिप्फला किण्ण होदि त्ति वुत्ते, ण होदि, अवगदवेदत्तण बंधगाबंधगा दो वि रासीओ पडिग्गहिदाओ जेण संदेहो सिद्धेसु वि बंधगाबंधगविसओ समुप्पज्जदि। तण्णिराकरणट्ठं सिद्धा अबंधा त्ति पुधपरूवणा कदा। सेसं सुगमं।

कसायाणुवादेण कोधकसाई माणकसाई मायकसाई लोभकसाई बंधा ॥ १९ ॥

सुगममेदं।

अकसाई बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ २० ॥

कुदो? सजोगाजोगेसु अकसायत्तस्सुवलंभा।

सिद्धा अबंधा ॥ २१ ॥

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ १८ ॥

शंका—जिस कारण अपगतवेदी जीव सिद्धोंमें भी है अत एव पूर्वोक्त सूत्रमें अपगतवेदकी प्ररूपणासेही सिद्धोंकी भी प्ररूपणा हो जाती है, इसलिये सिद्धोंकी पृथक् प्ररूपणा निष्फल क्यों नहीं हो जाती?

समाधान—ऐसा कहनेपर कहते हैं कि सिद्धोंकी पृथक् प्ररूपणा निष्फल नहीं है, क्योंकि, अपगतवेदपनेकी अपेक्षा बन्धक और अबन्धक ये दोनों राशियां ग्रहण की गयीं हैं जिससे सिद्धोंमें भी बन्धक और अबन्धक विषयक सन्देह होने लगता है अतः इसी सन्देहको दूर करनेके लिये 'सिद्ध अबन्धक हैं' ऐसी पृथक् प्ररूपणा की गयी है। शेष सूत्रार्थ सुगम हैं।

कषायमार्गणानुसार क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभकषायी जीव बन्धक हैं ॥ १९ ॥

यह सूत्र सुगम है।

अकषायी जीव बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं ॥ २० ॥

क्योंकि ग्यारहवें गुणस्थानसे लेकर तेरहवें गुणस्थान तकके सयोगी जीवोंमें तथा चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी जीवोंमें अकषायपना पाया जाता है।

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ २१ ॥

एदस्स सुत्तारंभस्स कारणं पुव्वं व परूवेदव्वं ।

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणी सुदअण्णाणी विभंगणाणी आभिणि-बोहियणाणी सुदणाणी ओधिणाणी मणपज्जवणाणी बंधा ॥ २२ ॥

सुगममेदं ।

केवलणाणी बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ २३ ॥

सिद्धा अबंधा ॥ २४ ॥

एत्थ अबंधा चेवेत्ति एवकारो किण्ण कदो ? ण[1], सुत्तारंभादो चेव तदुवलद्धीदो । सेसं सुगमं ।

संजमाणुवादेण असंजदा बंधा, संजदासंजदा बंधा ॥ २५ ॥

संजदा बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ २६ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि[2] सुगमाणि ।

इस सूत्रके पृथक् रचे जानेका कारण पहलेके समान प्ररूपित करना चाहिये ।

ज्ञानमार्गणानुसार मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी और मनःपर्ययज्ञानी बन्धक हैं ॥ २२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

केवलज्ञानी बन्धक है और अबन्धक भी हैं ॥ २३ ॥

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ २४ ॥

शंका—यहां ' अबन्धक ही हैं ' ऐसा अन्य विकल्पका निषेधात्मक ' एव ' पदका प्रयोग क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं किया, क्योंकि, सूत्रकी पृथक् रचनामात्रसे ही वही अर्थ जान लिया जाता है ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

संयममार्गणानुसार असंयत बंधक हैं और संयतासंयत बंधक हैं ॥ २५ ॥

संयत बंधक भी हैं अबंधक भी हैं ॥ २६ ॥

ये दोनों सूत्र सुगम हैं ।

---

१ मु. प्रती (ण,) इतिपाठः

२ अ. आ. क. प्रतिषु सुत्ताणि इतिपाठो नास्ति ।

णेव संजदा णेव असंजदा णेव संजदासंजदा अबंधा ॥ २७ ॥

विसएसु दुविहासंजमसरूवेण पवुत्तीए अभावा असंजदा ण होंति सिद्धा। संजदा वि ण होंति, पवुत्तिपुरस्सरं तण्णिरोहाभावा। तदो णोभयसंजोगो वि। सेसं सुगमं।

दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणी अचक्खुदंसणी ओधिदंसणी बंधा ॥ २८ ॥

केवलदंसणी बंधा वि अत्थि,[1] अबंधा वि अत्थि ॥ २९ ॥

सिद्धा अबंधा ॥ ३० ॥

सव्वमेदं सुगमं।

लेस्साणुवादेण किण्हलेस्सिया णीललेस्सिया काउलेस्सिया तेउ-लेस्सिया पम्मलेस्सिया सुक्कलेस्सिया बंधा ॥ ३१ ॥

सुगममेदं।

न संयत, न असंयत, न संयतासंयत ऐसे सिद्ध जीव अबंधक हैं ॥ २७ ॥

विषयोंमें दो प्रकारके असंयम अर्थात् इन्द्रियासंयम और प्राणिअसंयम रूपसे प्रवृत्ति न होनेके कारण सिद्ध असंयत नहीं हैं। सिद्ध संयत भी नहीं हैं, क्योंकि, प्रवृत्तिपूर्वक उनमें संयमका अभाव है। इस कारण संयम और असंयम इन दोनोंके संयोगसे उत्पन्न संयमासंयमका भी सिद्धोंके अभाव है। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

दर्शनमार्गणानुसार चक्षुदर्शनी अचक्षुदर्शनी और अवधिदर्शनी बन्धक हैं ॥ २८ ॥

केवलदर्शनी बन्धक भी है और अबन्धक भी हैं ॥ २९ ॥

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ ३० ॥

यह सब सूत्र सुगम हैं।

लेश्यामार्गणानुसार कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, तेजो-लेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और शुक्ललेश्यावाले बन्धक हैं ॥ ३१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

---

१ अ. ह. प्रतिषु 'अत्थि' इति पाठो नास्ति।

अलेस्सिया अबंधा ॥ ३२ ॥

सिद्धा अबंधा त्ति एत्थ पुधणिद्देसो किण्ण कदो ? ण, अलेस्सिएसु बंधाबंधो-भयभंगाभावेण संदेहाणुप्पत्तीदो । सेसं सुगमं ।

भवियाणुवादेण अभवसिद्धिया बंधा, भवसिद्धिया बंधा वि अत्थि अबंधा वि अत्थि ॥ ३३ ॥

णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया अबंधा ॥ ३४ ॥

सव्वमेदं सुगमं ।

सम्मत्ताणुवादेण मिच्छादिट्ठी बंधा, सासणसम्मादिट्ठी बंधा, सम्मामिच्छादिट्ठी बंधा ॥ ३५ ॥

कुदो ? सयलासवसंजुत्तत्तादो ।

सम्मादिट्ठी बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ ३६ ॥

लेश्यारहित जीव अबन्धक हैं ॥ ३२ ॥

शंका—'सिद्ध अबन्धक हैं' ऐसा पृथक् निर्देश क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं किया, क्योंकि लेश्यारहित जीवोंमें बन्धक और अबन्धक ऐसे दो विकल्प न होनेसे कोई सन्देह उत्पन्न नहीं होता। अर्थात् 'अलेश्य अबन्धक हैं' इतना कहनेमात्रसे ही स्पष्ट हो जाता है कि लेश्यारहित अयोगी जिन भी अबन्धक हैं और सिद्ध भी अबन्धक हैं। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

भव्यमार्गणानुसार अभव्यसिद्धिक जीव बन्धक हैं, भव्यसिद्धिक जीव बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं ॥ ३३ ॥

न भव्यसिद्धिक न अभव्यसिद्धिक ऐसे सिद्ध जीव अबन्धक हैं ॥ ३४ ॥

यह सब सूत्रार्थ सुगम है।

सम्यक्त्वमार्गणानुसार मिथ्यादृष्टि बन्धक हैं, सासादनसम्यग्दृष्टि बन्धक हैं और सम्यग्मिथ्यादृष्टि बन्धक हैं ॥ ३५ ॥

क्योंकि, उक्त जीव समस्त कर्मास्रवोंसे संयुक्त होते हैं।

सम्यग्दृष्टि बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं ॥ ३६ ॥

कुदो ? सासावाणासवेसु सम्मद्दंसणुवलंभा ।

सिद्धा अबंधा ॥ ३७ ॥

सुगममेदं ।

सण्णियाणुवादेण सण्णी बंधा, असण्णी बंधा ॥ ३८ ॥

णेव सण्णी णेव असण्णी बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ ३९ ॥

विणट्ठणोइंदियखओवसमादो केवलणाणिणो णो सण्णिणो; तत्थ इंदियावट्ठंभबलेणाणुप्पण्णबोधुवलंभादो णो असण्णिणो । तदो ते बंधा वि अबंधा वि, बंधाबंधकारणजोगाजोगाणमुवलंभा ।

सिद्धा अबंधा ॥ ४० ॥

सुगममेदं ।

क्योंकि, चौथेसे तेरहवे गुणस्थान तकके आस्रव सहित और चौदहवें गुणस्थानवर्ती आस्रव रहित, ऐसे दोनों प्रकारके जीवोंमें सम्यग्दर्शन पाया जाता है ।

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ ३७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

संज्ञीमार्गणानुसार संज्ञी बन्धक हैं, असंज्ञी बन्धक हैं ॥ ३८ ॥

न संज्ञी न असंज्ञी ऐसे केवलज्ञानी जिन बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं ॥ ३९ ॥

उनका नोइन्द्रियज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशम नष्ट हो गया है, इसलिये केवलज्ञानी जीव संज्ञी नहीं है तथा उनके मात्र इन्द्रियोंके अवलम्बनसे ज्ञानकी उत्पत्ति नहीं होती इसलिये वे केवलज्ञानी जीव असंज्ञी नहीं हैं । अतः वे न संज्ञी और न असंज्ञी होकर बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं क्योंकि उनको सयोगी अवस्थामें बन्धका कारण योग पाया जाता है और अयोगी अवस्थामें अबन्धका कारण योगका अभाव रहता है । इस प्रकारके केवलज्ञानी जिन बन्धक भी होते हैं और अबन्धक भी होते हैं ।

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ ४० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ प्रतिषु 'केवलणाणी सण्णिणो तत्थ णोइंदिया-' इति पाठः ।

आहाराणुवादेण आहारा बंधा ॥ ४१ ॥

अणाहारा बंधा वि अत्थि, अबंधा वि अत्थि ॥ ४२ ॥

सिद्धा अबंधा ॥ ४३ ॥

सुगममेदं ।

एसो बंधगसंताहियारो पुव्वमेव किमट्ठं परूविदो? 'सति धर्मिणि धर्माश्चिन्त्यन्त' इति न्यायात् बंधयाणमत्थित्ते सिद्धे संते पच्छा तेसिं विसेसपरूवणा जुज्जदे। तम्हा संतपरूवणं पुव्वमेव कादव्वमिदि। एवमत्थित्तेण सिद्धाणं बंधयाणमेक्कारसअणियोगद्दारेहि विसेसपरूवणट्ठमुत्तरगंथो अवइण्णो ।

एवं बंधगसंतपरूवणा समत्ता ।

आहारमार्गणानुसार आहारक जीव बन्धक हैं ॥ ४१ ॥

अनाहारक जीव बन्धक भी हैं, और अबन्धक भी हैं ॥ ४२ ॥

सिद्ध अबन्धक हैं ॥ ४३ ॥

ये सूत्र सुगम हैं

शंका—यह बन्धकसत्त्वाधिकार पहले ही क्यों प्ररूपित किया गया है ?

समाधान—'धर्मीके सद्भावमें ही धर्मोंका चिन्तन किया जाता है' इस न्यायके अनुसार बंधकोंका अस्तित्व सिद्ध हो जाने पर पश्चात् उनकी विशेष प्ररूपणा करना योग्य है। इसलिये बन्धकोंकी सत्प्ररूपणा पहले ही करना चाहिये। इस प्रकार अस्तित्वसे सिद्ध हुए बन्धकोंके ग्यारह अनुयोगों द्वारा विशेष प्ररूपणार्थ आगेकी ग्रन्थरचना हुई है।

इस प्रकार बन्धकसत्प्ररूपणा समाप्त हुई।